आईना -दर- आईना

(समकालीन ग़ज़लें)

डी एम मिश्र

आईना -दर- आईना

(समकालीन ग़ज़लें)

डी एम मिश्र

प्रकाशक: नॉटनल

प्रकाशन: सितंबर, 2025

© डी एम मिश्र

समर्पण

माँ की प्रेरक स्मृति

और

पिता जी के स्वप्न को

भूमिका

कविता के परिवार में ग़ज़ल का स्थान अलग से रेखांकित किया जाता है। न सिर्फ़ विधा के स्तर पर बल्कि अरबी, फ़ारसी से लेकर रेख़्ता, हिन्दवी, उर्दू, हिन्दुस्तानी, हिन्दी तक से जीवन रस ग्रहण करती, अपनी ख़ुद की शैलियाँ विकसित करती हुई उसकी अलग और विशिष्ट लोकतांत्रिक पहचान है। समयसंकुलता वश अक्सर लंबी कविता 'क्वोट' करना सुविधाप्रद नहीं होता ऐसे में अपनी क्षिप्रता, अपने 'स्पार्कस' अपनी त्वरा और तेजस्विता के बूते ग़ज़ल का एक शेर आपकी सटीक अभिव्यक्ति बन जाता है। अमीर ख़ुसरो खड़ी बोली हिन्दी के पहले कवि हैं, पहले ग़ज़लकार भी और भाषायी अवतरण के पहले रूपाकार भी -

जे हाले-मिस्कीं , मकुन तगाफुल दुराए नैना बनाय बतियाँ

के ताबे - हिजराँ , न दारमे- दिल न लेहु काहे लगाय छतियाँ।

यह शेर इंगित करता है कि अपने शैशव काल से ही ग़ज़ल न सिर्फ हिन्दी उर्दू की गंगा - जमुनी भाषायी संस्कृति की पैरोकार रही बल्कि अपनी परंपरा में सर्वसमावेशी भी। हिन्दी ,बल्कि कहें , हिन्दुस्तानी ग़ज़ल कहते ही ग़ज़ल को एक व्यापक दुनिया मिल जाती है। श्री डी एम मिश्र ग़ज़ल की उस बड़ी दुनिया के ग़ज़लकार हैं।

मौजूदा दौर अंधे अतिरेकों और पूर्वाग्रहों का दौर है। हर चीज़ गंदली की जा रही है। मिश्र जी के आईने में उन खरोचों से गुज़रना एक संवेदनशील शायर के जलते अहसासों से होकर गुज़रना है -

रेत पर मत किसी की वफ़ा को लिखो

आसमाँ तक कहीं उड़ न जाये ख़बर।

फूल थोड़े गये टहनियाँ चुप रहीं

पेड़ काटा गया, बस इसी बात पर।

मिट्टी की पकड़ हमें आश्वस्त करती है -

छू लिया मिट्टी तो थोड़ा हाथ मैला हो गया

पर, मेरा पानी से रिश्ता और गहरा हो गया।

शायरी का परचम जब लहराता है तो बानगी देखते बनती है-

कभी लौ का इधर जाना, कभी लौ का उधर जाना

दिये का खेल है तूफ़ान से अक्सर गुज़र जाना

श्री मिश्र बुनियादी रूप से परिवर्तन और आक्रोश के शायर हैं सो उन्हें बड़ी आसानी से दुष्यन्त , अदम गोंडवी, रामकुमार कृषक , शलभ ,नूर मुहम्मद नूर , देवेन्द्र आर्य के कुनबे में रखा जा सकता है। पर , कभी - कभी उनकी ग़ज़लों में रवानगी और

उदात्तता उर्दू के मेजर शायरों के आसपास लहरा उठती है, वहाँ वे मीर हैं , ग़ालिब हैं , मख़दूम हैं। कुछ लोग कहते हैं, हिन्दी ग़ज़ल दुष्यन्त और अदम से आगे निकल गयी है तो कुछ कहते हैं आज की ग़ज़ल में निहित राजनीतिक व्यंग्य के कारण उसके इतिवृत्तामक हो जाने का ख़तरा पैदा हो गया है , कुछ और हैं जो कहते हैं ग़ज़ल एक शास्त्रीय विधा है सो उसकी पाकीज़गी हर क़ीमत पर बनाए रखी जानी चाहिए। श्री मिश्र की ग़ज़लें वैसी किसी भी बंदिश को नही मानतीं, और आख़िरी निकष जनता को मानती हैं,कारण ग़ज़ल का वजूद जनता के चलते है न कि शुद्धतावादी आलोचकों के चलते। मुक़द्दर पर दो तरह की बातें , पर दोनेंk सच। श्री मिश्र नियति से दो - दो हाथ करने की ज़िद को नहीं छोड़ते। जहाँ वे इस नियति को स्वीकारते हैं -

खिलौने का मुक़द्दर है यही तो क्या करे कोई

नहीं खेलें तो सड़ जाये जो खेलें टूट जाता है।

वहीं यह भी-

अँधेरा जब मुक़द्दर बन के घर में बैठ जाता है

मेरे कमरे का रोशनदान तब भी जगमगाता है।

श्री मिश्र की उँगली इस हत्यारे समय की नब्ज़ पर है। त्रिलोचन ने कभी जिसके बारे में कहा था-'कल अँधेरे में जिसने सर काटा /नाम मत लो हमारा भाई है। श्री मिश्र कहते हैं -

मौत का मंज़र हमारे सामने था

थरथराता डर हमारे सामने था।

जो हमारे क़त्ल की साज़िश में था कल

दोस्त अब बनकर हमारे सामने था।

इस हत्यारे समय में नियति की किसी भी बर्बरता से हार न मानने की ज़िद हमें उनके ग़ज़लकार के मर्म और धर्म के प्रति आश्वस्त करती है -

लंबी है ये सियाहरात जानता हूँ मैं

उम्मीद की किरन मगर तलाशता हूँ मैं।

संजीव

(प्रख्यात साहित्यकार, साहित्य अकादमी से सम्मानित)

अनुक्रम

आईने में खरोचें न दो इस क़दर	14
भेदे जो बड़े लक्ष्य को वो तीर कहाँ है	15
ग़ज़ल बड़ी कहो मगर सरल ज़बान रहे	16
उधर देखा, कभी खुद की तरफ़ देखा नहीं मैंने	17
हँसो या ना हँसो मातम मुझे अच्छा नहीं लगता	18
किसी किताब में जन्नत का पता देखा है	19
सत्ता की कामयाबियों में देखिये उसे	20
वो समंदर है तो होने दीजिए	21
कितने अनपढ़ भी हैं देखे कबीर होते हैं	22
पत्थर दिखा के उसको डराया नहीं जाता	23
उससे बोलो वो मनमानी बंद करे	24
हमें गुमराह करके क्या पता वो कब निकल जाये	25
नादाँ है उसे प्यार जताना नहीं आता	27
बेवजह वो मुस्कराता यह ख़बर अच्छी नहीं	28
अमीरी है तो फिर क्या है हर इक मौसम सुहाना है	29
रोज़ किसी की शील टूटती पुरूषोत्तम के कमरे में	31

कौन कहता है कि वो फंदा लगा करके मरा 32

ज़ुल्म और अन्याय सहने के लिए मजबूर था 34

गाँवों का उत्थान देखकर आया हूँ 35

गाँव - गाँव हो गया भिखारी 37

गाँव में अपने गली है गैल है 39

किसी जन्नत से जाकर हुस्न की दौलत उठा लाये 40

बनावट की हँसी अधरों पे ज़्यादा कब ठहरती है 42

राजनीति में आकर गुंडो के भी बेड़ापार हो गये 43

इक तरफ़ हो एक नेता इक तरफ़ सौ भेड़िये 45

वोटरों के हाथ में मतदान करना रह गया 47

हम भारत के भाग्य -विधाता मतदाता चिरकुट आबाद 49

करें विश्वास कैसे सब तेरे वादे चुनावी हैं 51

मगर हुआ इस बार भी वही हर कोशिश बेकार गई 53

मंत्री - अफ़सर दोनों भोग-विलास में डूबे हैं 55

सुनता नही फ़रियाद कोई हुक्मरान तक 56

पहले अपना चेहरा रख 57

ख़्वाब सब के महल बँगले हो गये 59

हमने गर आसमाँ उठाया है 60

मुहब्बत टूट कर करता हूँ, पर अंधा नहीं बनता 61

कभी लौ का इधर जाना, कभी लौ का उधर जाना 62

छू लिया मिट्टी तो थोड़ा हाथ मैला हो गया 63

प्राणों में ताप भर दे वो राग लिख रहा हूँ 64

खिली धूप से सीखा मैने खुले गगन में जीना 65

देर से जाना उसे वो आदमी मक्कार है 66

फ़रेब, झूठ का मंज़र कभी नहीं देखा 67

काँटों की बस्ती फूलों की, ख़ुशबू से तर है 68

गुलाबों की नई क़िस्मों से वो खुशबू नहीं आती 69

दूर से आकर हमारा वो क़रीबी हो गया 70

घनी है रात मगर चल पड़े अकेले हैं 71

सोया है इस तरह से कि उठना मुहाल है 72

थोड़ा -सा मुस्काने में क्यों इतनी देर लगा दी 73

आदमी देवता नही होता 74

दो घड़ी फूल की कहानी है 75

जिनके जज़्बे में जान होती है 77

प्यार मुझको भावना तक ले गया 78

प्यार के स्वप्न जितने विफल हो गये 79

इक घड़ी भी जियो इक सदी की तरह 80

घर से बाहर तो आकर हँसा कीजिए 81

रह- रह के कौन आ रहा दिल में, दिमाग में 82

प्यार समर्पण हार गया, हठ जीत गया 83

घुट -घुट हो मरना तो प्यार करे कोई 84

अगर वो चैन -व-क़रार था तो उदासियाँ दे गया कहाँ वो 85

दिल को बहलाओ मगर पागल बहलता ही नहीं 86

आपकी इक झलक देखकर प्यार की वो नज़र हो गया 87

मेरे आँसू कागज़ पर थक जाते चलते -चलते 88

बहुत तलाशा मैंने लेकिन मिला न कोई बेईमान 89

गुमराह अक्सर हो गया जहाँ रास्ता आसान था 90

शहर के ऐशगाहों में टँगे दुख गाँव वालों के 91

फिर आ गयी है नयी योजना निमरा करे सवाल 92

कहीं इरादा रूपया है तो कहीं तरक़्क़ी है 93

यतीमों की तरफ़ से भी मगर पैग़ाम लिख लेना 94

शौक़िया कुछ लोग चिल्लाने के आदी हो गये 95

दूर से बातें करो अब वो विधायक है 96

देश की धरती उगले सोना वो भी लिखो तरक़्क़ी में 97

ज़ुबाँ हो तो वो बोले, बेज़ुबाँ बोले मगर कैसे 98

फ़ितरतों से दूर उसकी मुफ़लिसी अच्छी लगी 99

कुछ मेरा दीवानापन था, कुछ नसीब का चक्कर था 100

जो कट गयी है ज़िंदगी मुड़कर उसे देखा नहीं 101

दरिया का हुस्न छोटे से क़तरे में देखिये 102

है वही दुनिया नये अंदाज़ में दिखने लगी 103

अँधेरा जब मुक़द्दर बन के घर में बैठ जाता है 104

उससे बातें करें पर वो ज़िंदा तो हो 105

वो हमको अच्छा लगता है हम उस पर प्यार लुटाते हैं 106

दरपन ने जो चोट सही वो पत्थर क्या जाने 107

बोझ धान का लेकर वो जब हौले- हौले चलती है 108

बुझे न प्यास तो फिर सामने नदी क्यों है 109

बहुत सुना था नाम मगर वो जन्नत जाने कहाँ गयी 110

समन्दर की लहर पहचानता हूँ क्या करूँ लेकिन 111

किसी की आँख से दुनिया हमें अब देखनी पड़ती 112

इन बुज़ुर्गों की ज़रूरत अब कहीं पड़ती नहीं 113

हवा में है वो अभी आसमान बाक़ी है 114

ये बड़े लोग हैं किरदार की बातें करते 116

उनकी उँगली में जो होता तो नगीना होता 117

दुकाँ छोटी हो लेकिन दोस्तों बैनर बड़ा रखना 118

मेरा आँगन मेरे घर में रहने को तैयार नहीं 119

नम मिट्टी पत्थर हो जाये ऐसा कभी न हो 120

जहर तुमने अकेले पी लिया ऐसा नहीं होता 122

हाले दिल क्या सुनाऊँ तुझे वक़्त गुज़रा नहीं भूलता 123

अपना है मगर अपनों सी इज़्ज़त नहीं देता 124

इतने क़रीब रह के मगर भूल गये हैं 125

झोंपड़ी में हों या हवेली में 127

कोई बंधन हो छूट जाता है 128

पलकों के शामियाने में ख़्वाब पल रहे थे 129

तुमने यार बजा फ़रमाया ग़ज़ल तो एक इशारा है 130

बड़े आराम से वो क़त्ल करके घूमता है 132

अँधेरा है धना फिर भी ग़ज़ल पूनम की कहते हो 133

ग़ज़ल ऐसी कहो जिससे कि मिट्टी की महक आये 134

समय बदलते अपने भी सब बदल गये 136

मिट्टी का जिस्म है तो ये मिट्टी में मिलेगा 137

अश्कों को मैंने पी के भी दिल को बड़ा किया 138

मौत का मंज़र हमारे सामने था 139

लंबी है ये सियाहरात जानता हूँ मैं 140

आईने में खरोचें न दो इस क़दर

आईने में खरोचें न दो इस क़दर

ख़ुद को अपना क़याफ़ा न आये नज़र

रेत पर मत किसी की वफ़ा को लिखो

आसमाँ तक कहीं उड़ न जाये ख़बर

तुम अभी तक वहीं के वहीं हो खड़े

झील तक आ गया ज़लज़ले का असर

रात कितनी ही लंबी भले क्यों न हो

देखना रात के बाद होगी सहर

शख्सियत का मिटाने चले हो निशाँ

ढूँढते हो मगर आदमी की मुहर

फूल तोड़े गये टहनियाँ चुप रहीं

पेड़ काटा गया बस इसी बात पर